© 2017 IJSRSET | Volume 3 | Issue 6 | Print ISSN: 2395-1990 | Online ISSN : 2394-4099
Themed Section: Engineering and Technology

पर्यावरण चेतना : बौद्ध धर्म के परिप्रेक्ष्य में

दिग्विजय
शोधच्छात्र
संस्कृत–विभाग
इलाहाबाद विश्वविद्यालय, इलाहाबाद

पर्यावरण भौतिक एवं जैविक संकल्पना है अतः इसमें पृथ्वी के दोनों अर्थात् अजीवित (भौतिक या अजैविक) तथा जीवित (जैविक) संघटकों को सम्मिलित किया जाता है, जो परस्पर प्रक्रिया द्वारा मानव तथा जीव–जन्तुओं के जीवन को प्रभावित करता रहता है, जिसमें अजैविक कारकों के अन्तर्गत– मृदा, जल, वायु तथा रसायन आदि एवं जैविक कारकों के अन्तर्गत–पौधे, पशु, सूक्ष्मजीव तथा मानव आदि आते हैं। ये सभी तत्त्व प्रतिदिन मानव जीवन को प्रभावित करते रहते हैं।

प्रसिद्ध विद्वान **टान्सले** ने पर्यावरण की निम्नलिखित परिभाषा दी है–''प्रभावकारी दशाओं का वह सम्पूर्ण योग, जिसमें जीव रहते हैं, पर्यावरण कहलाता है।''[1]

भारत प्राचीनकाल से विभिन्न धर्मों एवं सम्प्रदायों का देश रहा है। भारतीय भूमि पर प्रादुर्भूत् धर्मों में से बौद्ध धर्म (छठीं शताब्दी ई0पू0) का भी नाम बड़ी कुशलतापूर्वक लिया जाता है। बौद्ध धर्म का उद्भव ही बोधिवृक्ष की छाया में हुआ था। महात्मा बुद्ध ने सामान्य ज्ञान से बोधि तक का सोपान राजमहल में नहीं बल्कि प्रकृति की गोद में भ्रमणशील एवं समाधिस्थ होकर प्राप्त किया था। महात्मा बुद्ध अपने महाभिनिष्क्रमण से लेकर महापरिनिर्वाण तक का मार्ग प्रकृति एवं तरु की छत्रच्छाया में व्यतीत किया। ये सब घटनाएँ एकाएक नहीं होती, मनुष्य में जो भाव, चेतन एवं अचेतन मस्तिष्क में होते हैं उसी के समान उसके कार्य एवं अभिरूचि होती है। महात्मा बुद्ध का यह भाव ही, उन्हें राजमहल से निकालकर बोधिवृक्ष की शीतल छाया में ले आया और जब बोधिसत्व में ज्ञान अभिव्यक्ति की जिज्ञासा प्रकट हुई तो वह सारनाथ के हिरण्यवन में प्रस्फुटित हुआ। अनेक चैत्य एवं विहार प्रकृति के उन्मुक्त एवं शान्त वातावरण में सृजित हुए। जो सिद्धार्थ राजमहलों के जरा–मरण के परिवेश से खिन्न होकर मानवता के कल्याण तथा उसके निदान की खोज में निकले थे वह उन्हें कहीं और नहीं बल्कि वृक्ष की छाया में ही मिली तथा वह सिद्धार्थ से बुद्ध हुए। सिद्धार्थ ने गृहत्याग के पश्चात् छः वर्ष तक कठोर तपस्या की तथा पीपल के वृक्ष की शीतल छाया में उन्हें ज्ञान की प्राप्ति हुई। पीपल के वृक्ष के नीचे बुद्धत्व प्राप्ति के कारण इसे बोधि वृक्ष के नाम से प्रसिद्धि मिली। विश्व एवं बौद्ध साहित्य में जितनी प्रसिद्धि पीपल के वृक्ष को मिली उतनी प्रसिद्धि शायद ही किसी वृक्ष को मिली हो। इस वृक्ष के धार्मिक महत्त्व को देखते हुए सम्राट अशोक ने भी बोधि वृक्ष की पूजा स्वयं बोधगया जाकर की थी। बोधिवृक्ष

IJSRSET1844285 | Received : 01 Oct 2017 | Accepted : 20 Oct 2017 | September-October-2017 [(3)6: 1052-1057]

का बोधगया, साँची, मथुरा, अमरावती आदि स्थानों से प्राप्त शुंगकला के उदाहरणों में सुन्दर अंकन हुआ है। साँची के तोरण में वृक्षों का अलंकरण अत्यंत मनोहारी है, इसमें अशोक, शाल, चम्पा एवं पलाश वृक्षों का सजीव एवं अनुपम वर्णन प्राप्त होता है।

प्राकृतिक असन्तुलन के कारण ही प्राकृतिक आपदायें उत्पन्न होती हैं और यह प्राकृतिक असन्तुलन अज्ञानता से उत्पन्न होता है। अज्ञान की कड़ी टूटने पर वही प्रकृति मनुष्य के लिए आपदा लेकर आती है जो मानव जीवन तथा समस्त जीवधारियों के लिए सुख–समृद्धि को हमेशा–हमेशा के लिए बनाए रखती है तथा मनुष्य द्वारा प्रकृति को क्षति पहुँचाने पर वह स्वयं ही अपने सुख–समृद्धि को विनाश की तरफ गतिशील कर रहा है।

भारतीय मन सदा से पर्यावरण प्रेमी रहा है। भारतीय संस्कृति में जैन एवं बौद्धकाल कृषि एवं वृक्ष विषयक ज्ञान की दृष्टि से विशेष महत्त्व रखते हैं। बौद्ध साहित्य में अहिंसा के सिद्धान्त पर जोर देने से प्रथमतः कृषि के विकास में पर्यावरण चेतना की दृष्टि से विशेष मदद मिली। कृषि कार्य में कीड़े–मकोड़े के मरने की सम्भावना को इन्कार नहीं किया जा सकता था। इसी बात को जैन धर्म अहिंसा के सिद्धान्त पर अनावश्यक जोर दिया जिससे कृषकों को प्रोत्साहन नहीं मिल सका। महात्मा बुद्ध ने कृषि कार्य पर जोर दिया तथा पशुओं को कृषि कार्य के लिए अनिवार्य बनाया। बौद्धकाल में खेतों का सीमांकन हुआ करता था तथा वनभूमि को साफकर खेत तैयार किये जाते थे लेकिन इसके बावजूद भी उपयोगी वृक्षों को नुकसान नहीं पहुँचाया जाता था–

"सव्वं वनं छिन्दित्वा खेत्राणि कारित्वा कसिकम्मं करन्सु।"[2]

अर्थात् इस दृष्टान्त से हमें बौद्ध धर्म में पर्यावरणीय चेतना के विषय में जानकारी प्राप्त होती है।

महात्मा बुद्ध सदैव मानवता के कल्याण के लिए कार्य–कारण की श्रृंखला का अन्वेषण करते थे जिसकी अभिव्यक्ति उनके द्वादश निदान में प्रतीत होती है। सारे दुःखों का मूल अज्ञान है और पर्यावरण सन्तुलन बिगाड़ना मनुष्य की सबसे बड़ी अज्ञानता है।

बौद्ध दर्शन में ये जो चार आर्य सत्य हैं वे मनुष्य के दुःखों का विश्लेषण करते रहते हैं–

(i) दुःख। (दुःख है।)

(ii) दुःख समुदाय। (दुःख का कारण है।)

(iii) दुःख निरोध। (दुःख का निदान है।)

(iv) दुःख निरोधगामिनी प्रतिपद्। (दुःख निदान का मार्ग है।)

यदि हम इस जीवन दृष्टि को पर्यावरण रूपी दुःख से विश्लेषण करें तो निम्न श्रृंखला प्राप्त होती है–

(i) सूखा, बाढ़, अकाल आदि से मनुष्य दुःखी है।

(ii) इस दुःख का कारण पर्यावरण असन्तुलन है।

(iii) इस दुःख का निदान भी है।

(iv) पर्यावरण सन्तुलन बनाये रखना ही इस दुःख के निदान का मार्ग है।

उपर्युक्त आर्यसत्य पर्यावरण चेतना की एक नवीन दृष्टि प्रकट करते हैं जो समस्त मानवता के लिए उपादेय है।

महात्मा बुद्ध मानवता के दुःखों से अत्यन्त व्यथित होकर, राजसिंहासन छोड़कर, दुःखों के निवृत्ति हेतु साधना की। यह दुःख केवल आध्यात्मिक न होकर जरामरण के कष्ट–अकाल, बाढ़, सूखा, बीमारी आदि सांसारिक थे। ये सब दुःख कहीं न कहीं पर्यावरण के असन्तुलन से सम्बन्ध रखते थे। इन सब दुःखों के निवृत्ति के लिए उन्होंने उपाय स्वरूप अष्टाङ्गिक मार्ग बताया, जो इस प्रकार है–

(i) सम्यक् दृष्टि (ii) सम्यक् संकल्प (iii) सम्यक् वाक् (iv) सम्यक् कर्मान्त (v) सम्यक् आजीव (vi) सम्यक् व्यायाम (vii) सम्यक् स्मृति (viii) सम्यक् समाधि

प्रत्येक सांसारिक वस्तु या घटना को उसके मूल स्वरूप में देखना ही **सम्यक् दृष्टि** है। किसी क्षणभंगुर या दुःखात्मक चीज को नित्य या सुखात्मक मान लेना सम्यक् दृष्टि का अभाव है और सम्यक् दृष्टि के अभाव के कारण ही प्रकृति का अनावश्यक दोहन या क्षरण होता है जो दुःखात्मक है तथा मनुष्य सम्यक् दृष्टि के अभाव के कारण इसको सुखात्मक मान लेता है। अतः यह मिथ्या दृष्टि ही पर्यावरण असन्तुलन का कारण है। इसके विपरीत सम्यक् दृष्टि पर्यावरण पोषण का पर्याय है।

राग–द्वेष, हिंसा, कामादि वासनाओं के परित्याग तथा जीवधारियों के प्रति सहानुभूति का दृढ़ निश्चय ही **सम्यक् संकल्प** है। पर्यावरण असन्तुलन की सभी घटनाओं का कारण सम्यक् संकल्प का अभाव है। मूलतः प्रकृति का अनावश्यक दोहन राग–द्वेष, हिंसा एवं काम भाव के कारण होता है। इन सबके त्याग का संकल्प ही सम्यक् संकल्प है।

वाणी की पवित्रता, सत्यता एवं नियंत्रण ही **सम्यक् वाक्** है। कोई भी आचरण मनसा, वाचा, कर्मणा सत्य होने पर ही सही माना जा सकता है। सिंह गर्जना प्रायः हिंसाजन्य होती है। सम्यक् वाणी नियंत्रित, सौम्य एवं अहिंसा जन्य होती है। इस प्रकार सम्यक् वाक् ध्वनि प्रदूषण पर नियंत्रण है।

कर्मों का शुद्ध एवं नियमित होना ही **सम्यक् कर्मान्त** है और यह तभी सम्भव है जब कर्म नियमित हो तथा दृष्टि, संकल्प एवं वाणी का नियमन हो। इसके विपरीत अनियमित कर्म ही प्रकृति का दोहन एवं शोषण कराते हैं। जबकि नियमित एवं नियंत्रित कर्म पर्यावरण संतुलन को पोषण प्रदान करते हैं।

अन्याय रहित जीविकोपार्जन ही **सम्यक् आजीव** है। हम दूसरों की चिन्ता किये बिना ही, अपनी जीविका किसी भी तरह चलाना चाहते हैं चाहे क्यों न ही वे कर्म वर्जित या निन्दनीय हो। जैसे–वाहनों एवं फैक्टरियों इत्यादि से निकलने वाला अनियंत्रित उत्सर्जन या विनाशकारी धुँआ, हम सभी प्राणियों तथा वनस्पतियों के लिए भी घातक सिद्ध होता है। इस तरह अनियंत्रित उत्सर्जन पर आश्रित जीविका उचित या न्यायपूर्ण नहीं है। इसका मतलब यह नहीं है कि इन संसाधनों को बन्द कर दिया जाय बल्कि इनके अनियंत्रित उत्सर्जन में नियंत्रण से है। जिससे जीव–जन्तुओं एवं वनस्पतियों को हानि न पहुँचे। बौद्ध दर्शन मध्यममार्गी है, इसलिए वह यह नहीं कहता कि सारे विकास अवरूद्ध कर दिये जायें बल्कि उनका समुचित नियंत्रण हो ताकि सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड के लिए सहायक हो।

शुभ की उत्पत्ति और अशुभ के निरोध हेतु सतत् प्रयत्न ही, **सम्यक् व्यायाम** है।[3] जैसा मानव मस्तिष्क में पर्यावरण क्षति को समझने तथा उसके प्रति उत्तरदायी होना, शुभ का प्रतीक है तथा इसके विपरीत किये गये कार्य–जिससे प्राकृतिक असन्तुलन पैदा होता है उन कलुषित विचारों के त्याग का निरन्तर प्रयत्न ही अशुभ के निरोध को प्रदर्शित करता है जो प्राकृतिक सन्तुलन में सहायक सिद्ध होते हैं।

शारीरिक तथा मानस भोग्य–वस्तुओं, काम, मोह, लोभ आदि भावों की अनित्यता और अशुचिता की निरन्तर भावना एवं चित्त की एकाग्रता ही, **सम्यक् स्मृति** है।[4] अर्थात् वास्तविक ज्ञान का निरन्तर स्मरण है। मनुष्य शारीरिक तथा मानसिक इत्यादि भोग्य वस्तुओं की नश्वरता के बारे में जब प्राकृतिक असन्तुलन के कारण सूखा, बाढ़, भूकम्प इत्यादि घटनाएँ होती हैं तो उस समय सभी लोग पर्यावरण संतुलन की आवश्यकता पर बल देते हैं लेकिन कुछ ही समय पश्चात् फिर भूल जाते हैं और उसका अनावश्यक दोहन प्रारम्भ कर देते हैं जबकि बौद्ध दर्शन, सही आचरण का हमेशा स्मरण करते रहना चाहिए इसका पक्षधर है।

चित्त की एकाग्रता द्वारा निर्विकल्पक प्रज्ञा की अनुभूति, **सम्यक् समाधि** है।[5] यह योग साधना से प्राप्त होती है। 'कुशल' (शुभ) में चित्त की एकाग्रता समाधि है।[6] जब चित्त शुभ कर्मों में एकाग्र होता है तब न तो कोई हिंसा हो सकती है और और न ही असन्तुलन। यह परम साम्यावस्था है जो पर्यावरण सन्तुलन का श्रेय है।

बौद्ध दर्शन का प्रतीत्यसमुत्पाद या कारणतावाद भगवान बुद्ध के उपदेशों का आधारभूत सिद्धान्त है और भगवान बुद्ध के इन्हीं उपदेशों में ही पर्यावरण से सम्बन्धित सिद्धान्त भी प्रतिपादित है। बौद्ध दर्शन किसी नियति या ईश्वर की इच्छा (दैववाद) में विश्वास नहीं करता। जो घटनाएँ घटित होती हैं वे पूर्णनियोजित या ईश्वरेच्छा से प्रेरित नहीं बल्कि प्रत्येक घटना कारण सापेक्ष होती है। पर्यावरण असन्तुलन न तो नियति है न ही यह दैवी इच्छा का प्रतिफल है बल्कि मनुष्य के द्वारा प्रकृति का अनावश्यक दोहन है। जिसका परिणाम प्रलय है। प्रतीत्यसमुत्पाद के एक सूत्र के अन्तर्गत इस प्रकार कहा जाता है कि–

इमास्मिमं सति इदं भवति, इमास्मिमं असति इदं भवति।

अर्थात् इसके होने पर (कारण) होता है (कार्य) इसके न होने पर यह नहीं होता है।

बौद्ध दर्शन के कर्म सिद्धान्त के अनुसार विभिन्न प्राणियों, पशु–पक्षियों एवं पेड़–पौधे जन्मगत भिन्न या श्रेष्ठ नहीं होते बल्कि कर्मगत होते हैं। जब हम किसी भी वनस्पति या जीव–जन्तु को हानि पहुँचाते हैं तो उसमें मनुष्य का भेदभाव या श्रेष्ठता का विचार दृष्टिगत होता है। लेकिन यह विचार त्याग देने पर सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड में समरसता का मार्ग प्रशस्त होता है।

भगवान बुद्ध भिक्षुओं को पेड़ काटने से मना किये थे। पाली ग्रंथों के अध्ययन से यह स्पष्ट हो जाता है कि वृक्षों पर देवता का निवास होता है। श्री भिक्षु धर्मरक्षित ने अपने लेख ''पूज्यनीय वृक्ष'' में एक कथा को उद्धृत किया है जिसमें बताया गया है कि पेड़ काटते समय वृक्ष देवता के पुत्र का हाथ कट गया था। जैसे–

एक बार भगवान बुद्ध आलकी नगर के अग्गालव चैत्य में विहार कर रहे थे। उस समय आलकी के एक भिक्षु ने विहार बनाने के उद्देश्य से वृक्ष काटना प्रारम्भ किया। उस वृक्ष पर निवास करने वाले देवता ने भिक्षु से कहा–''भन्ते! अपने भवन के लिए मेरे भवन को मत काटिये।'' भिक्षु ने बात नहीं माना और वृक्ष को काट डाला। देवता के बच्चे का हाथ कट गया। तब वह बड़ा क्रुद्ध हुआ और भिक्षु को जान से मारना चाहा। परन्तु यह सोचकर कि मुझे ऐसा करना शोभा नहीं देगा, क्यों न मैं भगवान बुद्ध से कहूँ। वह उनके पास गया और उस बात को बतलाया। तब भगवान बुद्ध ने देवता को समझाते हुए किसी अन्य वृक्ष पर रहने के लिए कहा और भिक्षुओं के लिए नियम बनाते हुए कहा कि–

''जो कोई भिक्षु वृक्ष गिरायेगा, पाशितिय (प्रायश्चित) करना होगा।''[7]

प्राचीन ग्रन्थों में दार्शनिक दृष्टियों को कथानक के माध्यम से धार्मिक पुट देकर प्रस्तुत किया जाता था ताकि लोगों के समझ में आसानी से आ जाय। इस कथानक में महात्मा बुद्ध की पर्यावरणीय चेतना दृष्टिगत है।

इस प्रकार भगवान बुद्ध ने पर्यावरणीय सन्तुलन बनाये रखने के लिए जगत के समस्त पदार्थों को जड़ एवं चेतन पदार्थों में बाँटा था। जड़ तत्त्व के अन्तर्गत–पृथ्वी, जल, अग्नि, वायु व इनमें विकसित पदार्थों के गुणों का वर्णन प्राप्त होता है तथा चेतन पदार्थों के अन्तर्गत–पेड़–पौधे, पशु–पक्षी व मनुष्य आते हैं। इन पदार्थों एवं गुणों का वर्णन बौद्ध धर्म के ग्रन्थ मिलिन्दपन्हों में मिलता है।

इसके माध्यम से उन्होंने यह बताने का प्रयास किया है कि प्रत्येक वस्तु में कोई न कोई गुण अवश्य रहता है जो पर्यावरण सन्तुलन में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। इसलिए उन्होंने बौद्ध भिक्षुओं को जागरूक करते हुए कहा कि खाली समय में उन्हें पेड़–पौधों में पानी देना और उनके संरक्षण का कार्य करना चाहिए। अतः बौद्ध दर्शन में महात्मा बुद्ध द्वारा किये गए ये सब कार्य उनकी पर्यावरणीय चेतना को प्रदर्शित करते हैं।

सन्दर्भ–ग्रन्थ–सूची

1. विद्यालय प्रशासन संगठन एवं स्वास्थ्य शिक्षा–एस0पी0 सुखिया (खण्ड–स), पृष्ठ–101
2. जातक–हिन्दी, जिल्द 3, पृष्ठ–83
3. भारतीय दर्शन आलोचन और अनुशीलन–चन्द्रधर शर्मा, पृष्ठ–49
4. भारतीय दर्शन आलोचन और अनुशीलन–चन्द्रधर शर्मा, पृष्ठ–49
5. भारतीय दर्शन आलोचन और अनुशीलन–चन्द्रधर शर्मा, पृष्ठ–49
6. भारतीय दर्शन का सर्वेक्षण, संगमलाल पाण्डेय, पृष्ठ–129
7. आजकल, जुलाई 55, कृष्ण मुरारी सिंह रचित शास्त्र विज्ञान सम्मत वन पर्यावरण, ए0पी0सी0 पब्लिकेशन प्रा0लि0, नई दिल्ली, पृष्ठ–16